P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-10* June- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

मूल्य शिक्षा का जीवन में महत्व एवं आवश्यकता

भरत सिंह असवाल
अतिथि प्रवक्ता,
शिक्षा विभाग,
हे0न0ब0ग0(केन्द्रीय)
विश्वविद्यालय,
एस0 आर0 टी0 परिसर,
बादशाहीथौल, टिहरी गढ़वाल

सारांश

मूल्य आधारित शिक्षा किसी भी समाज एवं राष्ट्र को किसी भी प्रकार की बुराई, हिंसा, भ्रष्टाचार तथा उत्पीड़न के खिलाफ आधार प्रदान करती है। किसी भी सभ्य समाज के लिए शिक्षा प्राण हैं तथा जीवन मूल्य उसकी आत्मा, मूल्यों का सम्बन्ध जीवन के दृष्टिकोण से है यदि मूल्यों को जीवन कहा जाय तो अतिश्योक्ति नही होगी। मूल्यों की अवधारणा से तात्पर्य सिद्धान्त, आदर्श, तथा नैतिकता से है। मूल्यों का विकास समाज में होता है सामाजिक सम्पर्क द्वारा नैतिक विकास होता है। मूल्य, अभिवृत्तियॉ एवं आदर्श हमारे व्यवहार को निर्देशित करते है। मूल्यों से अभिप्रेरणा को दिशा मिलती है। आज के जीवन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण मूल्य वे होते है जो सत्यम्, शिवम् एवं सुन्दरम् से ओत–प्रोत होते है और व्यक्ति के व्यवहार में समाहित हो जाते है, हमारे जीवन को आनन्दमय, सुखदायी बनानें में मूल्यों का महत्व अतुलनीय है। अतः प्रस्तुत शोघ पत्र में मूल्य शिक्षा की अवधारणा तथा वर्गीकरण एवं मूल्यों का जीवन में महत्व और मूल्य शिक्षा की आवश्यकता पर विस्तार से चर्चा की गयी है।

मुख्य शब्द : मूल्य, समाज, जीवन, व्यवहार एवं सुन्दरम् आदि।

प्रस्तावना

किसी भी सभ्य समाज के लिए शिक्षा प्राण हैं तथा जीवन मूल्य उसकी आत्मा, मूल्यों का सम्बन्ध जीवन के दृष्टिकोण से है यदि मूल्यों को जीवन कहा जाय तो अतिश्योक्ति नही होगी। व्यक्ति के जीवन में मूल्य का विकास सामाजिकरण की प्रक्रिया के साथ–2 होता है। व्यक्ति समाज के बिना जीवित नही रह सकता। रेमन्ट ने कहा है कि**''समाज विहीन व्यक्ति एक कोरी कल्पना है।''**[9]व्यक्ति स्वभाव से ही सामाजिक प्राणी है वह समाज से अलग रहकर ऐसे जीवित नहीं रह सकती, जैसे मछली जल के बिना। अतः व्यक्ति और समाज को अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि इन दोंनों का अस्तित्व एक दूसरे में निहीत है। मूल्यों की अवधारणा से तात्पर्य सिद्धान्त, आदर्श तथा नैतिकता से है। सामाजिक सम्पर्क द्वारा नैतिक विकास होता है। हम कुछ मूल्यों को प्राथमिकता देते है कुछ को त्यागते हैं मानव व्यवहार केवल विचारों द्वारा ही नहीं अपितु भावों के द्वारा भी होता है। स्थायी भावों के आधार पर ही मूल्यों का चयन होता है। मूल्य का अपना महत्व इसके अन्दर छिपा होता है। मूल्य अभिवृतियां एवं आदर्श हमारे व्यवहार को निर्देशित करते हैं।

मूल्य का अर्थ

मूल्य को अंग्रेजी में Value कहते हैं और Value लैटिन भाषा के शब्द valere (वैलियर) से बना है वैलियर का अंग्रेजी में अर्थ है। ability, utility, importance तथा हिन्दी में अर्थ – योग्यता, उपयोगिता व महत्व, मूल्य का अर्थ वह मान, जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति, वस्तु, या किसी सूक्ष्म सत्ता (भाव, विचार आदि) के गुण योग्यता व महत्व को आंकते है। मैनी (2005) के अनुसार ''देश, काल, परिस्थिति के सन्दर्भ में जन–सामान्य मान्यताएं ही मूल्य बन जाती है। मूल्य, अभिवृत्तियॉ एवं आदर्श हमारे व्यवहार को निर्देशित करते है''[1] मूल्यों से अभिप्रेरणा को दिशा मिलती है। हमारे व्यवहार का नियत्रंण करने में मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये अभिप्रेरणा को शक्ति देते है आवश्यकताओं की सम्पुष्टि के स्वरुप को निर्धारित करने में निर्णायक का कार्य करते है। हम सहयोग करेंगें अथवा अहयोग, सहनशील होंगे अथवा भयभीत, यह हमारे विचारों पर ही निर्भर नहीं करता वरन् यह हमारे मूल्यों द्वारा हमारे स्थायी भावों तथा अर्जित परिमार्जित मूल्य प्रवत्तियों के द्वारा निश्चित होता है।

मूल्यों का वर्गीकरण

मूल्यों का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। **पेरी** ने मूल्यों को नकारात्मक, सकारात्मक, विकासवादी, वास्ततिक आदि श्रेणी में विभाजित किया है। उसी प्रकार कुछ विद्वानों ने मूल्यों को सुखवादी, सौन्दर्यवादी,

धार्मिक, आर्थिक, नैतिक तथा तार्किक मूल्यों में बांटा है।[3] सक्सेना (2000), मे आलपोर्ट एवं वर्नन ने मूल्यों को स्प्रेंगर के वर्गीकरण के आधार पर छः श्रेणियों में विभक्त किया है– (अ) **सैद्धान्तिक मूल्य**–सत्य आधारित कार्यों में रूचि लेना। (ब) **आर्थिक मूल्य**–उपयोगी, व्यावहारिक तथा द्रव्य जनित कार्यों में रूचि लेना। (स) **सौन्दर्यात्मक मूल्य**–कलात्मक पहलुओं में रूचि लेना। (द) **सामाजिक मूल्य**–दूसरों की सहायता में रूचि लेना। (य) **राजनैतिक मूल्य**–पद, प्रभुत्व तथा शक्ति रखने में रूचि लेना। (र) **धार्मिक मूल्य**–आध्यात्मिक कार्यों में रूचि लेना।[6] **शर्मा, अन्जना, (2011) जे•ई• टर्नर, ने** मूल्यों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया गया है–(अ) **अमूर्त मूल्य**–वस्तुगत रूचियाँ कही जाती हैं। (ब) **मूर्त मूल्य**–विचारगत रूचियाँ कहलाती हैं।[7] **सिंह (1997) अरवन** के अनुसार मूल्य विभाजन निम्न प्रकार है–(अ) **जैविकीय मूल्य**–इनमें शारीरिक, आर्थिक तथा मनोरंजन सम्बन्धी मूल्य आते हैं। (ब) **परा–जैविक मूल्य**–इस श्रेणी में बौद्धिक, धार्मिक तथा सौन्दर्यात्मक मूल्य आते हैं। (स) **सामाजिक मूल्य**–इसमें चरित्र तथा परस्पर प्रेम के मूल्य आते हैं।[8]

इस वर्गीकरण के अतिरिक्त भारत में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली (National Council of Educational Research and Training,NCERT) ने जो मूल्यों की सूची जारी की है वह बड़ी लम्बी है तथा उनके द्वारा दशायें गए मूल्यों की सूची में 83 मूल्य बताए गए हैं। इस लम्बी सूची का श्रेणीकरण किया जाना आवश्यक है। श्रेणीकरण के बाद सूची, लघु रूप में देखी जा सकती है। यह श्रेणीकरण वैयक्तिक, शैक्षिक, सामाजिक, चारित्रिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक तथा सौन्दर्यात्मक के रूप में किया जा सकता है।

मूल्य शिक्षा का जीवन में महत्व

मूल्य वह सिद्धांत है जो किसी सभ्य संस्कृति वाले समाज की आधार नींव डालते है। हमारे जीवन को आनन्दमय, सुखदायी बनानें में मूल्यों का महत्व अतुलनीय है। वर्तमान में यह एक ज्वलंत एवं चिन्ता का विषय बन गया है कि हमारे मूल्यों का ह्रास दिन–प्रतिदिन हमारे कार्यो में साफ दिखाई दे रहा है समाज मूल्यहीन दिखाई पड़ रहा है। ''राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2000) में भी विद्यालयी शिक्षा के सभी स्तरों पर मूल्यों के विकास की बात कही गयी है।''[4] प्रश्न उठता है कि मूल्यों के विकास हेतु पाठ्यक्रम का कौन निर्माण करे? कैसे हो? उसका क्रियान्वयन कौन करे? निःसन्देह यह सारे कार्य अध्यापकों द्वारा ही किये जा सकते हैं परन्तु इसके लिये अध्यापकों में स्वयं के लिये वांछित मूल्यों की स्थापना होनी आवश्यक है तभी वे अपने विद्यार्थियों में इन मूल्यों के विकास के प्रति तत्पर हो सकेंगे। जब तक उनके जीवन में मूल्यों का कोई स्थान नहीं होगा, मूल्यों के प्रति अनुभूति नहीं होगी तब तक वे मूल्यों की समुचित शिक्षा विद्यार्थियों को नहीं दे सकेंगे और उन्हें कुसंगति, भ्रष्टाचार, लक्ष्य विहीनता आदि बुराइयों से नहीं बचा सकेंगे। आज भारत के युवा वर्ग को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो उनमें सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को अपने जीवन में अपनाने को प्रेरित करें तथा वे मानवता पर खरे सिद्ध हो सकें, निःसन्देह विद्यार्थियों में इस प्रकार के मूल्यों को स्थापित करने के लिये शिक्षकों को तैयार करना पड़ेगा यदि हमारे शिक्षक ऐसे मूल्यों से युक्त होंगे तभी वे सशक्त हो सकेंगे और अपने विद्यार्थियों में मूल्यों का प्रस्फुटन कर सकेंगे।

मूल्य शिक्षा की आवश्यकता

आज भारतीय समाज में लोगों द्वारा जिस प्रकार के व्यवहार का प्रकटीकरण किया जा रहा है उससे ऐसा आभास हो रहा है कि नैतिक मूल्य विलुप्त होते जा रहे हैं समाज मूल्यहीन दिखाई पड़ रहा है। यही कारण है कि आज भौतिक प्रकृति के बावजूद भी देश को अराजकता की स्थिति से गुजरना पड़ रहा है क्षेत्रवाद, भाषावाद, भ्रष्टाचार, सम्प्रदायवाद, आंतकवाद जैसे विवादों को बढावा देकर क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति हेतु राष्ट्रीयता के भाव को कुण्ठित किया जा रहा है। मूल्य आधारित शिक्षा किसी भी समाज एवं राष्ट्र को किसी भी प्रकार की बुराई, हिंसा, भ्रष्टाचार तथा उत्पीड़न के खिलाफ आधार प्रदान करती है ।प्राचीन काल के महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, सांन्दीपन एवं चाणक्य जैसे मूल्यों से युक्त अध्यापकों ने ही श्री राम, श्री कृष्ण एवं सम्राट चन्द्रगुप्त जैसे विद्यार्थियों को उत्पन्न किया अध्यापकों को अपने व्यवहार से जन सामान्य के जीवन में मूल्यों के सम्प्रेषण हेतु एक प्रेरक का कार्य करता है इस कारण से अध्यापकों का जीवन मूल्यों से युक्त होना अति आवश्यक है आज के सन्दर्भ में यह औचित्य और बढ़ जाता है सन्त कबीर दास जी ने भी कहा है –

''गुरू गोविन्द दोउ खड़े काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरू आपने गोविन्द दिए बताय।।''

इसमें कबीर दास जी ने यह सन्देश दिया कि यदि गुरू (शिक्षक) गुणवान(मूल्यों से युक्त) है तो वह अपने शिष्य को ईश्वर की पहचान करा सकता है।

''गुरू कुम्हार शिष्य कुंभ है, गढि गढि काढै खोट।
अन्दर हाथ सहार दे, ऊपर वारे चोट।।''

अर्थात् एक गुणवान गुरू कुम्हार के समान है और शिष्य घड़े के समान जिस प्रकार एक कुम्हार अच्छे घड़े के निर्माण के लिये अन्दर से हाथ का सहारा देकर ऊपर से बार–बार पिटता है और उसमें बची हुई मिट्टी को निकाल देता है। इसी प्रकार एक गुणवान गुरू अपने शिष्य में अच्छे जीवन मूल्यों को विकसित कर लेता है और अवांछित बुराइयों को उसमें से निकाल देता है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा के माध्याम से छात्र–छात्राओं को मूल्यों की शिक्षा दी जाय और यह आवश्यक रूप से सिखाया जाय कि शिक्षा प्राप्त करके वही व्यक्ति समाज में स्थान पा सकता है जो मूल्यों के प्रति अपनी आस्था तथा विश्वास कायम करें। सन् 1950 में जब भारतीय संविधान का गणतंत्रीय रूप आया तो उसमें मूल्यों की चर्चा की गई। भारतीय गणराज्य को मूल्यों पर आधारित धर्मनिरपेक्ष स्थिति के साथ में भी प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास आवश्यक बताया गया। 1948–49 में डॉ0 राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन किया गया उसमें निम्न प्रकार अनुशंसा की गई–(1) सभी शिक्षण संस्थाओं में दो मिनट शांत अवस्था में रहने के बाद प्रार्थना सभाओं का आयोजन किया जाय। (2) स्नातक

स्तर पर छात्र–छात्राओं को भारतीय साहित्य, धर्म व दर्शन का ज्ञान कराया जाय।

उक्त सुझाव मूल्य शिक्षा से ही सम्बन्धित हैं–1959 में डॉ0 श्री प्रकाश की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ जिसकी संस्तुति धार्मिक व नैतिक शिक्षा पर ही रही। इन्होंने छात्र–छात्राओं में उचित आचरण के विकास पर बल दिया। इसके साथ ही शिक्षक के कार्यक्रम में परिवार को स्थान दिया गया, प्रार्थना से कक्षा कार्य का प्रारम्भ हो, धार्मिक मूल्यों का ज्ञान कराया जाय, पाठ्यक्रम में समाज सेवा को सम्मिलित किया जाय, स्वतन्त्र चिन्तन, वाद–विवाद तथा आलोचनात्मक व्याख्या के गुणों का विकास किया जाय तथा आयोजन के कार्यक्रमों से छात्राओं को अवगत कराया जाय। 1964–66 में डॉ0 डी0 एस0 कोठरी की अध्यक्षता में एक और कमीशन का गठन हुआ। इस कमीशन की अनुशंसा यह रही कि छात्रों में शिक्षा के द्वारा सामाजिक वातावरण की भावना का विकास, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति निष्ठा, विशिष्ट साहित्य के अध्ययन की भावना का विकास, विभिन्न धर्मों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन जैसे गम्भीर अध्ययन विषय पाठ्यक्रम में सम्मिलित किये जाएँ। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में भी इस बात पर गहरी चिन्ता प्रकट की गई कि **''जीवन के लिये आवश्यक मूल्यों का हास हो रहा है और मूल्यों पर से लोगों का विश्वास उठता जा रहा है शिक्षा क्रम में ऐसे परिवर्तन की जरूरत है जिससे सामाजिक व नैतिक मूल्यों के विकास में शिक्षा सशक्त साधन बन सके।''**[5] मूल्यों का विकास केवल बच्चों तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि व्यस्को को भी मूल्य विकसित करने हेतु प्रेरित करना चाहिए। परिवार एवं स्कूल के अतिरिक्त मूल्यों के विकास के सन्दर्भ में हमें व्यक्तिगत प्रयास भी करने चाहिए जो कि वर्तमान समय की आवश्यकता है। इस प्रकार मूल्यों के विकास में एक रणनीति बनायी जाय। जिससे हमारे समाज को दिशा, दशा एवं आदर्शता प्रदान हो सकें। एन.सी.ई.आर.टी. (NCERT) ने 1988 में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया जिसे प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रीय पाठ्यक्रम कहा जाता है। पाठ्यक्रम को 1997 में राष्ट्रीय शिक्षा ने स्वीकृती दी तथा उक्त पाठ्यक्रम को विद्यालय स्तर का अनिवार्य अंग बनाने पर बल दिया तथा इसमें मूल्यों के विकास जैसे ईमानदारी, सत्यता, सहनशीलता आदि पर तथा शिक्षकों को अन्धविश्वासों से दूर रहने पर बल दिया गया है। इसी की सहायता से व्यक्ति तथा समाज का संतुलित विकास किया जा सकता है। यह आशा की जाती है कि ये क्रियाऐं व्यक्तियों में मूल्यों के विकास में सहायक होगी अतः कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों में मूल्यों का विकास करने के लिए प्रशिक्षण संस्थाओं में अच्छी शिक्षण अधिगम परिस्थितियों का विकास किया जाय।

उददेश्य

प्रस्तुत शोध पत्र के मुख्य उद्देश्य निम्न है–

1. व्यक्ति के जीवन में मूल्यों का विकास करना।
2. अध्यापकों में वांछित मूल्यों का विकास करना।
3. समाज एवं राष्ट्र के विकास में मूल्यों का विकास करना।
4. प्रजातंत्रिक मूल्यों का विकास करना।
5. सभी विद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रमों में मूल्यों का विकास करना।
6. भारतीय संस्कृति के पुरातन मूल्यों का विकास करना।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह निष्कर्ष निकालता हैं कि मूल्य संप्रत्यय, अर्थ एवं वर्गीकरण बालक और शिक्षार्थी द्वारा मूल्यों को समझने में सहायक हैं। बालक के व्यवहार में मूल्य परिलक्षित हों, इस प्रकार की कामना सभी शिक्षक करते हैं। लेकिन शिक्षक के व्यवहार में मूल्य परिलक्षित हों, समाज इसकी आशा सभी शिक्षकों से करता है। उपरोक्त विश्लेषण से विदित होता है कि समय–समय पर शिक्षा आयोग, शिक्षा समितियों तथा मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक व्यक्तियों और विभिन्न विद्वानों द्वारा जो सुझाव प्रस्तुत किए गऐं उनमें व्यक्ति का सुखद जीवन, मूल्य, समाज, जीवन व्यवहार, मूल्य शिक्षा का जीवन में महत्व तथा आवश्यकता, प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास, देश का विकासवादी लक्ष्य, नैतिकता का विकास तथा भौतिकता, आधुनिकता को जानने की सामर्थ्य, शुद्ध आचरण तथा भौतिकवादी व अध्यायत्मवादी संस्कृति में समन्वयवादी दृष्टिकोण जैसे विचारों पर बल दिया गयाहै।

मूल्य शिक्षा के सन्दर्भ में भविष्यगामी सुझाव

वर्तमान जगत मे मूल्यों के निरन्तर गिरावट के कारणों मे मुख्यतः आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण, सामाजिक परिवर्तन, अभिभावकों की कार्य के प्रति उदासीनता व दूषित शैक्षिक प्रणाली आदि है साथ ही शिक्षक जिनके ऊपर मूल्यों को गतिमान बनाये रखने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी है, लेकिन शिक्षक अपने निजी स्वार्थो में लगे हैं। मूल्यों के विकास के लिए अत्यधिक आवश्यक हैं कि (घर, परिवार, विद्यालय व शिक्षक अपने उत्तरदायित्व निभाएँ) अस्तु आज सदाचरण, सत्य, अहिंसा, प्रेम, शान्ति जैसे शाश्वत परम्परागत मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा की महती आवश्यकता है ये मूल्य न केवल व्यक्तिगत उत्थान के लिये अपितु सामाजिक एवं राष्ट्रीय प्रगति एवं शान्ति के लिये परम आवश्यक है। कुछ महत्वपुर्ण सुझाव निम्न है–

1. वर्तमान शिक्षा पद्धति और मूल्यों में कोई समन्वय नहीं है। यह सर्वविदित है कि आज विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करने के लिए भाषण, नोटस तथा बने बनाये उत्तरों को दोहराने का कौशल ही विद्यार्थी की परीक्षा का मापदण्ड है विद्यार्थी न तो अपने अस्तित्व को पहचान पाता है, न हीं पुस्तकीय ज्ञान उसकी सहायता करता है। ये गिरते हुए मूल्य हमारी शिक्षा के लिए चुनौती है। इस लिए विद्यार्थियों को अपनी रूचि, योग्यता, क्षमता, स्वःअध्ययन के लिए पूर्ण स्वतन्त्रा दी जाय। जिससे विद्यार्थी का समाजिक, मानसिक, बौद्विक, चारित्रिक तथा नैतिक विकास हो सके। शिक्षा में सुधार करके ही विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास होता है।
2. शिक्षक का स्वयं का आचरण भी ऐसा होना चाहिए कि उसका व्यक्तित्व विद्यार्थीयों के लिए अनुकरणीय बन जाए। हर विद्यार्थी का आदर्श उसका शिक्षक ही

होता है। वह वही कार्य करने की चेष्टा करता है जो शिक्षक करता है। शिक्षक जिन मूल्यों को विद्यार्थी को देना चाहता है वह स्वयं उसमें भी व्यक्त होने चाहिए क्योकि माता–पिता के बाद छात्र अपने शिक्षक के ही समीप अधिक रहता है। वह अपने जीवन का महत्वपूर्ण समय अपने शिक्षक के साथ ही व्यतीत करता है। वह उन्हें अपना आदर्श मानता है। विद्यार्थी शिक्षक में कहीं न कहीं अपनी छवि ढूँढता है। विद्यार्थी शिक्षकों की गतिविधियों पर अत्यधिक ध्यान देते है और उनका अनुकरण करने की कोशिश करते है। वस्तुतः शिक्षक ही विद्यार्थीयों के लिए दिशा–निदेशक, मित्र और प्रथ–प्रदर्शक के रूप में कार्य करता है। शिक्षक की उपस्थिति और निर्देशन की बालक को महती आवश्यकता है। यह सर्वविदित है कि बालक का सर्वांगीण विकास शिक्षक पर ही निर्भर करता है। शिक्षक किसी भी बड़े परिर्वतन के लिए इससे अधिक उपयुक्त उपलब्ध वर्ग कोई नही हो सकता। शैक्षिक क्षमताओं के साथ–2 शिक्षकों के उत्तरदायित्वों में अपने व्यवसाय तथा गुणवता के प्रति प्रतिवद्धता लगातार बढ़नी चाहिए। इसी कारण से मानव मूल्यों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता सदा ही समाज की निगाह में रहती है।

3. केन्द्र व राज्य सरकार के अधीन सभी विद्यालयों में नैतिक, सामाजिक व आध्यत्मिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा दी जाये व किसी संस्थाओं से भी इसका अनुपालन करने की अपेक्षा की जाए।
4. भारत का इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र, साहित्य, भाषाओं की पाठ्य–पुस्तकों के पुनःनिर्माण की आवश्यकता है। इनका निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि छात्रों मे सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, सौन्दर्यात्मक, आर्थिक, राजनीतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को आत्मसात् करने की प्रेरणा मिले। कहने का तात्पर्य यह है कि पाठ्य–पुस्तके मूल्य–परक होनी चाहिए। कीरीट जोशी की रिपोर्ट में भी यह कहा गया है कि छात्रों के मूल्य निरूपण पर सीखने की प्रकिया का बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ता है। विद्यालय की सब क्रियाएं, पाठ्यक्रम निर्माण, शिक्षण विधियों एवं मूल्यांकन आदि की इस प्रकार से संरचना होनी चाहिए कि वह स्वतः वांछित मूल्यों की और ले जाये। इसके लिए ऐसे साहित्य के सृजन की आवश्यकता है जो विशेष रूप से शिक्षा में मूल्य निरूपण के लिए है। अतः शिक्षा का प्रभाव किसी न किसी रूप में छात्रों के मूल्यों के विकास को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। विद्यालय में अध्ययनरत् छात्र ही आगे चलकर समाज के कर्णधार बनेगे। इसलिए पुनःपाठ्यक्रम मे परिर्वतन लाना आपेक्षित है। शिक्षा को सैद्धान्तिक क्षेत्र तक सीमित न करके इसे जीवन से जोड़ा जाए।
5. विभिन्न जातीयों, विभिन्न धर्मों के सभी छात्रों के लिए ऐसी पाठ्यचर्या की व्यवस्था की जाय जो विभिन्न धर्मों के आध्यत्मिक व नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक ज्ञान करा सके। कोठारी आयोग (1964–66) में भी कहा गया है कि–''पाठ्यचर्या में एक गंभीर त्रुटि यह है कि इसमें सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा की व्यवस्था नहीं की गई है। हमारी सिफारिश है कि जहाँ कहीं संभव हो, बड़े–बड़े धर्मों के नीति सम्बन्धी उद्देश्यों की सहायता से सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा देने का जागरूक और संगठित प्रयत्न किया जाना चाहिए क्योंकि जीवन मूल्य एक प्रकार के स्थायी विश्वास होते है। आरंम्भ में एक बार जिन मूल्यों का बीज छात्रों मे बो दिया जाता है, बाद में उन्हें परिर्वतन करना कठिन हो जाता है।''[2]
6. शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है यह समय, स्थान, आवश्यकताओं, परिस्थितियों तथा समस्याओं के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। यदि शिक्षा गतिशील न होती तो हम विकास पथ पर अग्रसर नहीं हो पाते। मूल्य युग परिवर्तन के साथ–साथ बदलते हैं। वर्तमान वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी प्रधान युग में शिक्षा के प्रसार के बावजूद भी जीवन मूल्यों में कमी दिखाई पड रही है। मूल्य आधारित जीवन शैली को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी है कि विद्यालयों में मूल्यों के विकास हेतु विशिष्ट व संगठित प्रयत्न किये जाये। यह सर्व विदित है कि मूल्यों के सृजन तथा विकास की जिम्मेदारी शिक्षकों की है। अतः प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में मूल्य शिक्षण को अनिवार्य किया जाए।
7. मूल्य आधारित शिक्षा का आधारभूत पाठ्यक्रम राष्ट्रीय ढाँचें पर आधारित हो तथा प्राथमिक, माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय स्तरों पर मूल्य शिक्षा का उद्देश्य बालकों में भारतवर्ष की सभ्यता, संस्कृति, आदर्शो एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का ज्ञान करना होना चाहिए। शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपनी सभ्यता एवं संस्कृति में निरन्तर विकास करता है। शिक्षा जीवन है और जीवन ही शिक्षा है और यही कारण है कि जन जीवन स्थिर नहीं रहता तो शिक्षा स्थिर कैसे रह सकती है।
8. विशिष्ट विद्यालय मूल्य निर्धारित शिक्षा के लिए स्थापित किये जाने चाहिए प्रत्येक राज्य में कम से कम एक ऐसा विद्यालय होना चाहिए जो कि नर्सरी स्तर से पोस्ट ग्रेजुएट स्तर तक मूल्य निर्धारित शिक्षा प्रदान करें।
9. शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत बालक सत्य के आधार पर अहिंसा द्वारा प्रेम पूर्वक जीवन यापन करना सीखे। शिक्षा से ऐसा मनुष्य बनाना है जो स्वेच्छा से भारतीय संस्कृति के पुरातन मूल्यों का पालन करें। जिससे व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र का कल्याण सम्भव हो सकें।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *मैनी, डी0. (2005) : ''मानव मूल्य – परक शब्दावली का विश्वकोष,,'' खण्ड (पंचम), प्रकाशक प्रभात कुमार शर्मा द्वारा सरूप एण्ड सन्स, नई दिल्ली।*
2. *पाण्डेय आर. ,(2000): ''मूल्य शिक्षा के परिपेक्ष्य'', आर. लाल बुक डिपो मेरठ, पृ0–153*
3. *पेरी एवं सक्सेना, एन.आर. स्वरूप,(2005):''शिक्षा के सिद्धान्त'', आर. लाल. बुक डिपो मेरठ, पृ0–643*

4. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा,सारांश (2000), नई दिल्ली, एन•सी•ई•आर•टी• पृ0–2*
5. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986):''मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (शिक्षा विभाग), नई दिल्ली पृ0–19*
6. *सक्सेना, सरोज,(2000): ''शिक्षा के दार्शनिक एव समाज शास्त्रीय आधार'', साहित्य प्रकाशन आगरा पृ0–257*
7. *शर्मा, एस.एस, शर्मा, अन्जना, (2011):''शिक्षा के दार्शनिक एव समाजशास्त्रीय आधार,'' एच, पी, भार्गव बुक हाऊस 4/230 कचहरी घाट आगरा,पृ0 159–162*
8. *सिंह. आर. पी., (1997): ''ए स्टडी आफ वैल्यूज आफ अरबन एंड रूरल एडोलसेंट स्टूडेंट'', इडियन एजूकेशनअब्स्ट्रेक्स,, अंक–2, जनवरी 1997*
9. *शुक्ला, सी• एस•, (2009):''शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार,'' अनुभव पब्लिशिग हाउस इलाहाबाद पृ0–19*